वेदोऽखिलोधर्ममूलम्

वेद प्रकाश

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

मासिक पत्र (6-7 प्रतिमाह) मूल्यः ५ रुपये जून २०१४

कुल पृष्ठ संख्या 20, वजनः 40 ग्राम

अन्तःपथ

पिता पुत्र का वैदिक दर्शन (प्रा० राजेन्द्र 'जिज्ञासु')	३ से ६
हम कैसा ईश्वर चाहते हैं (अभिमन्यु कुमार खुल्लर, ग्वालियर)	६ से ९
'सब आर्यों के सम्मानीय एवं मूर्धन्य आर्य विद्वान्ः डॉ. भवानीलाल भारतीय' (मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून)	९ से १८

अपने अभिमान को नष्ट किए बिना कोई भी मनुष्य ईश्वर तक नहीं पहुँच सकता।

वक्त अच्छा जरूर आता है;
मगर वक्त पर ही आता है।

—•—

कागज अपनी किस्मत से उड़ता है;
लेकिन पतंग अपनी काबिलियत से,

इसीलिए किस्मत साथ दे या न दे;
काबिलियत जरूर साथ देती है।

—•—

दो अक्षर का होता है लक;
ढाई अक्षर का होता है भाग्य;
तीन अक्षर का होता है नसीब;
साढ़े तीन अक्षर की होती है किस्मत;
परन्तु ये चारों अक्षर 'मेहनत' से छोटे होते हैं।

—•—

जिन्दगी में दो लोगों का ख्याल रखना बहुत जरूरी है;
पिता जिसने तुम्हारी जीत के लिए सब कुछ हारा हो;
माँः जिसको तुमने हर दुःख में पुकारा हो।

—•—

भगवान की भक्ति करने से शायद हमें माँ न मिले;
लेकिन माँ की भक्ति करने से भगवान् अवश्य मिलेंगे।

—•—

आपको कौन मिलता है, यह समय तय करता है;
आप उनमें से किसका साथ चाहते हैं, यह आप तय करते हैं।
और उनमें से कौन आपके साथ रहता है;
यह आपका व्यवहार तय करता है।

—•—

'इंसान' एक दुकान है, और 'जुबान' उसका ताला;
जब ताला खुलता है, तभी मालूम पड़ता है
कि दुकान 'सोने' की है या 'कोयले' की।

वेदप्रकाश

संस्थापक : स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द

वर्ष ६३ अंक ११ वार्षिक मूल्य : तीस रुपये, एक प्रति ५ रुपये, जून, २०१४

सम्पा० अजयकुमार पूर्व सम्पादक : स्व० स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

ओ३म्

पिता–पुत्र का वैदिक दर्शन

–राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

वेद सदन, अबोहर–152116

इस लेख का शीर्षक पढ़कर स्वाध्यायशील आर्य समझ जायेंगे कि मैं किस विषय पर लिखने जा रहा हूँ। मेरे साहित्य के अनुरागी तो एकदम शीर्षक देखते ही कह देंगे कि पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय तथा डॉ० सत्यप्रकाश के शब्दों में वैदिक दर्शन पर कुछ लिखने के लिए लेखनी उठाई है। पचास वर्ष पूर्व आर्यगज़ट उर्दू में इस विनीत ने "वैदिक दर्शन पं० चमूपति जी के आहनी (लौह) कलम से" एक लेखक लिखा था जिसे उस समय के आर्यों ने झूम–झम कर पढ़ा था फिर स्वामी दर्शनानन्द जी पर भी उसी शैली में एक पठनीय लेख लिखा था। उपाध्याय जी पर तो लिखना मेरी दुर्बलता बन चुकी है। वेदप्रकाश के एक अंक में इन्हीं दिनों उपाध्याय जी के दर्शन पर प्रकाशित लेख पर प्रतिक्रिया पाकर पिता पुत्र दोनों के वैदिक दर्शन पर कुछ लिखने की प्रेरणा मिली।

सबसे बड़ा भेद:–हमारे सब मूर्धन्य दार्शनिक विद्वानों ने ईश्वर तथा उसकी रचना पर अपनी–अपनी शैली से लिखा है। यह पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय ही हैं जिन्होंने अत्यन्त मार्मिक शैली में यह लिखा है कि अन्य अस्तिकवादी मतों से आर्यसमाज का एतद्विषयक सब से बड़ा या मुख्य भेद यह है कि आर्यसमाज न तो अभाव से सृष्टि की उत्पत्ति मानता है और न ही यह मानता है कि ईश्वर ने अपने लिए सृष्टि की रचना की है। क्यों? सब जानते व मानते हैं कि "Nothing can come out of "nothing." Even now, in this created world, we see hundreds of things, which according to theists, are god's creation. **Not one of them is a creation out of nothing. A tree springs up, not out of nothing, but out of something."**

अर्थात् "कुछ नहीं" से तो कुछ नहीं निकल सकता। अब भी इस उत्पन्न हुई सृष्टि में हम सैंकड़ों ऐसी वस्तुयें देखते हैं जिन्हें आस्तिक ईश्वर द्वारा रचित मानते व जानते हैं। **इनमें से एक भी तो ऐसी नहीं जिसकी उत्पत्ति या रचना अभाव से हुई हो।** एक वृक्ष अंकुरित होता व फूटता है–'कुछ नहीं' से नहीं फूटता, परन्तु 'कुछ' (बीज) से अंकुरित होता है।

सम्पूर्ण आर्य साहित्य में हमारे किसी भी दार्शनिक साहित्यकार ने इतनी सहज, सरल तथा स्वाभाविक युक्ति से वैदिक सिद्धान्त का मण्डन नहीं किया।

कुछ लोगों का यह दृष्टिकोण है कि रचयिता ने अपनी महिमा दिखाने या बढ़ाने के लिए सृष्टि की रचना की। इस पर उपाध्याय जी ने लिखा है, "What glory is there if there is none to see my greatness except my own creatures?" अर्थात् जब मेरे बड़प्पन को देखने वाला कोई दूसरा है ही नहीं तो फिर शान का महिमा का अर्थ ही क्या है? केवल अपने रचे प्राणियों को अपनी बड़ाई दिखाना, यह कौन सी शान की बात है। फिर लिखा है, "glorification is something that is possible before equals or superiors only." बड़प्पन या शान तो समान स्तर वालों या अपने से उत्कृष्ट वरिष्ठ वर्ग में ही सम्भव है।

जो लोग ईश्वर की सत्ता ही नहीं मानते ऐसे नास्तिक वर्ग से उपाध्याय जी का प्रश्न है कि यदि ईश्वर नाम की कोई सत्ता नहीं और न ही अनादि चेतन जीवों की कोई सत्ता है तो फिर प्रकृतिवादी पाप व दुःख की उत्पत्ति की व्याख्या करें। संसार में दुख क्यों है? कहाँ से आया है और छल, कपट, रोग, पीड़ा, द्रोह संसार में क्यों है? किसी भी देश प्रदेश में आस्तिकवादी साहित्य में नास्तिकों से यह प्रश्न किसी ने कभी भी नहीं पूछा।

नास्तिक ही अपनी वाणी से तथा लेखनी से ईश्वर पर प्रहार करते हुए यह आक्षेप करते आ रहे हैं कि प्रभु दयालु है तो संसार में दीनता, दरिद्रता, दुःख व पाप ताप क्यों है? पहले दार्शनिक पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय हैं जिन्होंने पाप, पुण्य व दुःख सुख का विवेचन करते हुए नास्तिकों पर पलट वार करते हुए यह प्रश्न उठाया है।

आपने लिखा है, "God does not produce pain. It follows sin in natural sequence."

अर्थात् परमात्मा ने दुःख उत्पन्न नहीं किया यह तो पाप का स्वाभाविक परिणाम है। जीव की कर्म करने की स्वतन्त्रता पर विचार करते हुए आपने लिखा है कि जीव की कर्म करने की स्वतन्त्रता को छीनना या उसे स्वतन्त्रता से वञ्चित

रखना तो सबसे बड़ा अभिशाप है फिर तो आप (जीव) मृतकों के समान हो गये। जड़ चेतन में फिर भेद क्या रहा? सब प्राणी ज्ञानशून्य, बुद्धि शून्य एक मशीन के सदृश हो गये जिसका अपना कोई भी प्रयोजन नहीं है।

त्रैतवाद की सिद्धि पर लिखा है कि "मैं हूँ" यह एक स्वयंसिद्ध सिद्धान्त है। जिसे अपनी सत्ता पर ही शंका है इसका अर्थ है कि उसको अपने विचारों में ही अविश्वास है। और मैं हूँ तो मेरे जैसे असंख्य प्राणी और भी तो हैं। केवल जीव जन्तु ही तो नहीं असंख्य जड़ पदार्थ भी तो हैं जो न मेरे वश में है और न ही मेरे जैसे अन्य जीवों के वश में है। "Sometimes I realize that though the master of my body, I am in many respects under some other power which is the greatest of all, the Paramount Self." अर्थात् कभी-कभी मैं यह समझता हूँ कि भले ही मैं अपने शरीर का स्वामी हूँ फिर भी मैं कई प्रकार से किसी और शक्ति के आधीन हूँ जो सर्वशक्तिमहान् है और सर्वोपरि है।

एक पुस्तिका में लिखा है कि मैं ही नहीं, मेरे जैसे असंख्य और भी चेतन जीव जन्तु हैं। हम भी कुछ बनाते है परन्तु हमारे शरीर, भूमि, नदियाँ, पर्वत, सूर्य, चाँद, तारे पेड़ पौधे तो हमने नहीं बनाये। इनका कोई रचयिता है जो महान से महान और सर्वव्यापक है।

सत्यप्रकाश जी ईश्वर की सत्ता का बोध करवाते हुए लिखते है कि भारत में बोया गया बीज ठीक उसी विधि से उगता है। जैसे कि अफ्रीका, यूरोप तथा अमरीका की धरती पर बोने से उगता है। इसका अर्थ यह हुआ, "The same is the artist and the art is the same." अर्थात् कला भी वही है और कलाकार भी वही है। प्राचीन काल में भी यही विद्या, यही कला थी, अब भी वही विधि है और भविष्य में यही विधि-विधान (Eternal Laws—अनादि नियम) रहेगा।

मृत्यु के बारे आप लिखते है, "Death is a door between two lives, the present one and the next one." अर्थात् मृत्यु तो दो जन्मों के बीच का द्वार है। एक वर्तमान का जीवन और एक अगला जन्म।

जीव की कर्म करने की स्वतन्त्रता पर आपने लिखा है, "It is again the freedom that imposes responsibility." अर्थात् यह ध्यान में रहे कि कर्म की स्वतन्त्रता उत्तरदायित्व के बिना नहीं। जिसने कर्म किया है वही उत्तरदाता है और वही फल भोगेगा।

प्रार्थना के विषय में लिखा है कि जब आपने प्रार्थना कर दी तो आपने एक बीज बो दिया है। यह उगेगा परन्तु इसकी निरन्तर देखभाल करनी होती है। "A

prayer is meant to make you dynamic and not static." अर्थात् प्रार्थना आपको गतिमान व ऊर्जावान् बनाने के लिए है न कि गतिहीन निष्क्रिय बनाने के लिए।

प्रभु की सृष्टि एक खुली पुस्तक है:–"This creation of our lord is an open book and there is no hiding. We ought to look to things and events with open eyes. If you have a mental disease, go to psychiatrist, he might help you." अर्थात् हमारे परमात्मा की रचना यह सृष्टि एक खुली पुस्तक है। कुछ भी तो छुपाकर नहीं रखा। हमें पदार्थों व घटनाओं को खुली आँखों से देखना चाहिए। यदि कोई मनोविकार है तो मनोचिकित्सक के पास जाओ। वह आपकी सहायता करेगा।" भाव यह है कि अंधविश्वासों में नहीं फंसना। सृष्टि के कार्य कारण सिद्धान्तों को जानो, मानो और ईश्वर के नियमों को जानकर संसार को दुःख मुक्त करिये।

(शेष फिर)

हम कैसा ईश्वर चाहते हैं

–अभिमन्यु कुमार खुल्लर
22, नगर निगम क्वार्टर्स, जीवाजीगंज लश्कर ग्वालियर (म. प्र.)

लेख का शीर्षक अधिकांश पाठकों को बेतुका लगेगा। है भी। ईश्वर क्या by Choice होता है, इच्छा से मिलता है? वास्तविकता तो यही है कि ईश्वर जैसा भी है, उसके स्वरूप को हमें पहचानना होगा, समझना होगा। वैदिकयुगीन ऋषि-महर्षियों का चिंतन इन्हीं बिन्दुओं पर केन्द्रित था।

वैदिककालीन ऋषियों ने ईश्वर का स्वरूप कैसा निर्धारण किया, उसे महर्षि दयानंद के शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है:–

ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप[1], निराकार[2], सर्वशक्तिमान[3], न्यायकारी[4], दयालु[5], अजन्मा[6], अनन्त[7], निर्विकार[8], अनादि[9], अनुपम[10], सर्वाधार[11], सर्वेश्वर[12], सर्वव्यापक[13], सर्वान्तर्यामी[14], अजर[15], अमर[16], अभय[17], नित्य[18], पवित्र[19] और सृष्टिकर्ता[20] है।

भू-मण्डल में ऐसे ईश्वर की स्वीकार्यता, मान्यता 1 अरब 96 करोड़ 8 लाख 53,114 वर्ष रही। इसमें छः हजार वर्ष कम किये जा सकते हैं, क्योंकि विद्वान मानते हैं कि महाभारत से एक हजार वर्ष पूर्व वैदिक सभ्यता का तिरोहन प्रारम्भ हो गया था।

वास्तविकता के धरातल पर हम विचार करें तो उपरोक्त गुणों से सम्प्रक्त ईश्वर की

स्वीकार्यता हमें दिखाई नहीं पड़ती। आज हम ईश्वर का स्वरूप अपनी इच्छा के अनुसार निर्धारित करना चाहते हैं या यों कहें कि हम अपनी इच्छा का ईश्वर चाहते हैं।

हम माँग, मनोकामना, मन्नत पूरी करने वाला ईश्वर चाहते हैं। माँग, मन्नत यदि कब्र में लेटा हुआ मुर्दा भी पूरी कर सकता है तो वह भी चलेगा। हमें मालुम ही नहीं है कि वेदोक्त ईश्वर ने सृष्टि रचना के साथ जीवात्मा की समस्त न्यायोचित माँगों को लोक कल्याण को, जीव के चहुँमुखी कल्याण को, आजीवन पूरी करने का ठेका ले लिया था। उन्हें पूरी करने का रास्ता भी बता दिया था। हम उस रास्ते पर चलना नहीं चाहते। चाहे वेद कहें या गीता–अन्यथा ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना का वह स्वरूप नहीं होता जो आज उपासना गृहों में सर्वत्र दिखलाई पड़ता है। लोग शुद्ध मन से ईश्वर की, केवल ईश्वर की उपासना के लिये इन उपासना गृहों में नहीं जाते। श्रद्धासुमन के साथ रिश्वत का प्रस्ताव भी अपनी आर्थिक सम्पन्नता के अनुरूप करते हैं। प्रसाद से लेकर स्वर्ण मुकुट भेंट करने तक। मन्नत पूरी न करने पर धौंस देते हैं–तेरी चौखट पर नहीं आयेंगे। यह प्यार भरा उलहाना नहीं होता है। दुःख, निराशा व आक्रोश भरे उद्‌गार होते हैं।

इस एक बिन्दु के अतिरिक्त अन्य दो बिन्दुओं पर विचार करना मेरे आशय को पूर्णतया स्पष्ट करने के लिये आवश्यक है।

दूसरा बिन्दु है–पापाचरण से मुक्ति। महर्षि दयानंद ने ईश्वर को न्यायकारी निरूपित किया है। न्यायकारी शब्द के अंतर्गत कर्मफल प्रदाता का गुण अन्तर्भूत (inherent) है यह हम नहीं चाहते।

पौराणिक बन्धुओं के लिये तो पाप-ताप निवारण के लिये ईश्वर की आवश्यकता ही नहीं है। गंगा मैया ही काफी हैं। प्रत्येक कुम्भ पर करोड़ो हिन्दु भक्तों के पाप गंगा मैया बिना डिटरजेन्ट लगाए (बिना कर्मफल दिये) धो डालती हैं। यदि इस प्रक्रिया को पूर्णतया सत्य भी मान लें तो गंगा मैया उन भक्तों से क्यों नहीं कहती कि इस बार तुम्हें पाप मुक्त करती हूँ, अगली बार नहीं करूँगी। लेकिन गंगा तो मुक्तिदायिनी जलप्रवाह है। पाप करके आइए, वह पाप धो देगी। आपका काम है पाप करना और गंगा का काम है, पाप धोना। यह कार्य निरन्तर उस समय से चल रहा है जब से गंगा को पाप धोने का ठेका धर्म धुरीणों ने अयाचित ही दे दिया था। वेदोक्त ईश्वर कहता है कि पाप कर्म से बिना यथोचित दण्ड पाये निवृत्ति नहीं, छुटकारा नहीं। गंभीर दुराचरण की कड़ी से कड़ी दण्ड व्यवस्था। प्रत्येक पापकर्म की दण्ड व्यवस्था। गंगा पूछती नहीं कि कौन सा पाप किया है। एक डुबकी लगाई और एक नहीं, सब पाप धुल गए।

पाप निवृत्ति का यह प्रसंग ईश्वर की न्याय व्यस्था से जुड़ा है। महर्षि ने संदर्भित वर्णन में ईश्वर का न्यायकारी होना भी बताया है। ईश्वर का वेदोक्त न्यायकारी स्वरूप विश्व भर

के 99.99 प्रति जनसमुदाय को स्वीकार्य नहीं है। प्रतिशत बढ़ाकर शत प्रतिशत कर सकता हूँ पर अज्ञात् ईश्वर भक्तों के लिए कुछ गुंजाइश तो इस अल्पज्ञ को छोड़नी ही पड़ेगी।

ईश्वर को न्यायकारी तो सब चाहते हैं। पर ऐसा न्यायाधीश जो उनके ही पक्ष में निर्णय दे। चाहे वे गलत हों या सही हों। हम ईश्वर को भी उसी रूप में देखना चाहते हैं जिस रूप में मानवीय न्यायालयों में दिखाई पड़ता है। मानवीय न्यायालयों में निर्णय गवाह, सबूत के आधार पर होता है। गवाह, सबूत ऐसे होने चाहिये जिनसे न्यायाधीश पूर्णतया संतुष्ट हो अन्यथा शक ही स्थिति में लाभ-आरोपी को मिलता है। हमारे यहाँ तो ब्रिटिश न्याय व्यवस्था की परम्परा अक्षरश: निभाई जा रही है। सौ अपराधी छूट जावें, लेकिन एक निपराधी को सजा नहीं मिले। ऐसी मानसिकता से अपराधियों को सजा मिलने की संभावना कम होती है। न्याय व्यवस्था की कई सीढ़ियां हैं। ट्रायल कोर्ट से लेकर उच्चतम न्यायालय तक। फिर जघन्य अपराधों में मृत्युदण्ड पाये अपराधियों को दया याचना के लिये राष्ट्रपति महोदय का द्वार खुला है। यह स्थिति है, मानवीय अदालतों की।

वैदिक ईश्वर की न्याय व्यवस्था में एक मात्र न्यायाधीश वही है। न उसके नीचे कोई अदालत है और न कोई ऊपर। उसे गवाह, सबूत, सिफारिश किसी की जरूरत नहीं क्योंकि वह सर्वान्तर्यामी है। पक्ष और विपक्ष दोनों ही पक्षकारों के कर्मों की उसे पूरी-पूरी जानकारी है। वह न्याय करता है; फैसला नहीं। फैसले मानवीय अदालतें करती हैं। जितना बड़ा वकील, उसके तर्कों की उतनी पैनी धार, उतना ही फैसला उसके पक्षकार के पक्ष में जाने की प्रबल संभावना। लेकिन कभी यहाँ भी दाव गलत पड़ जाता है। एक पेशी के करोड़ों रुपये डकार लेने के बाद भी वकील अपराधी को जमानत नहीं दिलवा सकते।

वेदोक्त ईश्वर सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी होने में यानि जहाँ प्रकरण घटित हुआ, वहाँ भी वह मौजूद था। जिन व्यक्तियों के बीच घटा उनकी आत्मा के साथ में विराजमान था। इसलिये वह यथातथ्य न्याय करता है। उसे डराया, फुसलाया नहीं जा सकता। उसके निर्णय की अपील नहीं क्योंकि उसके ऊपर, नीचे कोई नहीं। दण्ड कम-ज्यादा होने की गुंजाइश नहीं। व्यक्ति जानता है उसने पाप किया है, अपराध किया है। तरुण तेजपाल की तरह अपराध की स्वीकृति करने पर, पीड़िता से क्षमा याचना करने पर तथा स्वयं को कार्य से छः माह के लिये निर्वासन का दण्ड भोगने पर भी अपराध की निवृत्ति नहीं होगी। बताईये ऐसा ईश्वर कौन चाहेगा?

इस्लाम व ईसाईयत के पापाचरण से मुक्ति, छुटकारे के दावे यदि सामान्य बौद्धिक स्तर पर स्वीकार्य होते तो संपूर्ण विश्व बिना खून-खराबे के स्वत: प्रसन्नतापूर्वक ये धर्म अपना लेता और पूरी शांति से रहता। लेकिन ऐसा है नहीं।

इस्लाम में अल्लाहताला का न्याय रसूल की सिफारिश पर निर्भर करता है। और केवल इस्लाम के अनुयायियों पर ही लागू होता है। वेदोक्त ईश्वर की तरह, विश्व के समस्त मानव समुदाय पर नहीं। इस्लाम में अनुयायियों के गुनाह सुनाने/बताने के लिये रसूल की आवश्यकता है और इस जीवनकाल में पौराणिक भाईयों की तरह पापनिवृत्ति की कोई

व्यवस्था नहीं है। दूसरे अल्लाहताला की अदालत का फैसला केवल एक दिन यानी कयामत के दिन ही होगा। तब तक कब्र में ही रहना होगा।

ईसाईयत में यह कार्य ईसामसीह करते हैं। उन तक सिफारिश पहुँचाने का काम पादरी लोग "पाप की स्वीकृति (कानफैशन) कराकर करते हैं। इस तरह ईसाईयत में पापमुक्ति की दो टियरवाली व्यवस्था है। पाप कर्मों की मुक्ति की गारण्टी दोनों धर्मों (मतों) में है।

अब आप ही बताईये, हमें किस धर्म को मानने में लाभ है। एक वह जो पाप कर्मों से मुक्ति की गारण्टी, शत-प्रतिशत गारण्टी दे या वह जो न्यायनुसार दण्ड विधान की व्यवस्था करे। बड़ा कठिन है वेदोक्त न्यायकारी ईश्वर को मानना।

वेदोक्त संस्कृति, उसकी ईश्वर की अवधारणा, सृष्टि उत्पत्ति के साथ ही एक अरब 96 करोड़ 8 लाख 53 हजार 114, (-) 6 हजार, वर्ष तक इस भूमण्डल पर रही। इस विरासत का अंतिम उत्तराधिकारी महर्षि जैमिनी को माना जाता है। छः हजार वर्ष के अंतराल के पश्चात् गुरु विराजानंद जी महाराज ने इस विरासत को सम्भालने का दायित्व शिष्य दयानंद को सौंपा। जिस पथ पर महर्षि दयानंद को चलना पड़ा था वह पथ आज भी उतना ही कंट काकीर्ण है और उस पथ पर चलने वाले का हश्र भी उतना ही सुनिश्चित है जो महर्षि दयानंद का हुआ।

ओ३म्

'सब आर्यों के सम्मानीय एवं मूर्धन्य आर्य विद्वान: डॉ. भवानीलाल भारतीय'

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

डॉ. भवानीलाल भारतीय आर्य समाज में एक जाना-पहचाना नाम है। इस नाम की प्रसिद्धि के अनेक कारणों मे से एक है कि इन्होंने विगत 6-7 दशकों में आर्य समाज के साहित्यिक क्षेत्र में अपने लेखन व मौखिक प्रचार से अपना प्रमुख स्थान बनाया है। अनेक विषयों की नई-नई महत्वपूर्ण ज्ञानवर्धक पुस्तकें लिख कर आपने आर्य जनता को जो अनुसंधान, शोध एवं गवेषणापूर्ण साहित्य दिया है, वह सबके लिए पठनीय, उपयोगी व संग्रहणीय है। वैदिक व आर्य समाज के साहित्य के लेखन का जो कार्य आपके द्वारा हुआ है वह यदि आप न करते तो आर्य समाज इससे वंचित रहता और उसकी पूर्ति हमारे विचार से सम्भवत: जैसी आपने की वैसी अन्य विद्वान व लेखकों द्वारा नहीं की जा सकती थी। आपके इस पुस्तकों के लेखन कार्य का पूरक कार्य आर्य समाज या वैदिक विषयों पर पत्र-पत्रकाओं में लेखों के माध्यम से आर्य पाठकों को समय-समय पर मिलता

रहा। इससे युवकों व अन्य आयु वर्ग के लोगों को प्रेरणायें मिलती रही। हम स्वयं भी आप के लेखों को पढ़कर स्वयं में किसी नई शक्ति व ताजगी का अनुभव करते रहे और इस कारण से भी हमें अनेकानेक सफलतायें व प्रेरणायें आदि प्राप्त हुई। आज आप आर्य समाज के एक वयोवृद्ध, पितृ समान एवं पूजनीय विद्वान हैं जिससे हमें लगता है कि हमारा एक संरक्षक, मार्गदर्शक तथा महर्षि दयानन्द व आर्य समाज से प्रेम, सहानुभूति व वेदों के प्रचार की कशिश रखने वाला एक असाधारण व दिव्य व्यक्ति हमारे पास है। हम उनसे यह अपेक्षा करते हैं कि वह आर्य बन्धुओं को आर्शीवादात्मक व प्रेरणादायक विचार व उपदेश पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से सदा प्रदान करते रहें। आपने जीवन में लेखन व प्रचार द्वारा जो कार्य किए हैं, उसके लिए आप धन्य हैं और हम व सारा समाज आपका ऋणी है। हम आपकी लेखनी से निःसृत लेखन कार्यों के विषय में **"आर्य समाज के प्राज्ञ पुरुष"** पुस्तक में भूमिका में लिखी गई पंक्तियों को उद्धृत करना चाहते हैं जहां 26 जनवरी, 2009 को आपने लिखा है कि **'विगत साठ वर्षों में मैंने वेद और वैदिक साहित्य, प्राचीन आर्ष वांग्मय तथा इतर धर्मग्रन्थों का जहां व्यापक अध्ययन किया, वहाँ मेरे अध्ययन की परिधि में ऋषि दयानन्द तथा उनके अनुयायी विद्वानों, लेखकों, साहित्यकारों, कवियों, पत्रकारों तथा नेता श्रेणी के महानपुरुषों के जीवन वृतान्त भी आये। मैंने इन सबके जीवन एवं कृतित्व के बारे में अधिकाधिक जानकारी प्राप्त की तथा यथा सुविधा उन पर लिखा। यदि ऐसे लेखन का उल्लेख करूं तो उसमें जहाँ ऋषि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, स्वामी दर्शनानन्द, महात्मा कालूराम, पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा, पं. गणपति शर्मा, चांदकरण शारदा आदि के छोटे-बड़े जीवन-चरित आयेंगे, वहाँ विभिन्न लेखन विधाओं तथा शास्त्रीय अध्ययन में रत रहने वाले आर्य पुरुषों के जीवन और कार्य विषयक ग्रन्थों का भी समावेश रहेगा।''**

साहित्य सृजन व लेखन कार्यों में बहुत कम लोगों में प्रवृत्ति देखी जाती है। इसे ईश्वरीय देन God gift या हमारे पूर्व जन्म के प्रारब्ध का फल भी कहा जा सकता है या इसका कुछ अंश होने पर ही हम ऐसे कार्यों में प्रवृत होते हैं। हम अनुभव करते हैं कि प्रारब्ध के अनुसार हमारे जीवन में नये-नये मोड़ या turning points आते है। और हम प्रारब्ध के अनुसार पूर्व संस्कारों की प्रवृत्ति से उस नये मार्ग पर चलते हैं और सफलता के साथ नाम भी कमाते हैं। यह बात साहित्यिक जगत के लोगों के लिए ही नहीं अपितु अन्य क्षेत्रों में सफल

सभी मनुष्यों पर समान रूप से लागू होती है। अपने पूर्व संस्कारों की प्रवृति के अनुसार डॉ. भारतीय ने भिन्न कार्यों में से अध्यापन व आर्य समाज के वेदान्दोलन को अपने जीवन मे प्रमुख स्थान दिया। किसी भी व्यक्ति को जब वह किसी नये कार्य में प्रवृत्त होता है तो यह ज्ञान नहीं होता कि भविष्य मे उसका वह विचार व निर्णय उसे प्रतिष्ठा, सफलता, आत्म-सन्तोष व ज्ञान की किन-किन बुलन्दियों पर आरूढ़ करायेगा। गलत निर्णय करने से परिणाम इसके विपरीत भी होता है या हो सकता है। डॉ. भारतीय ने अपने विद्यार्थी जीवन व युवावस्था के दिनों मे आर्य समाज व वेदान्दोलन के जो निर्णय लिए थे तथा इस पर केन्द्रित रहकर जो पुरुषार्थ उन्होंने किया, वह उन्हें आर्य जगत मे शीर्षस्थ स्थान पर ले आये। हम इसे इस प्रकार से भी समझ सकते है कि जिस प्रकार से किसी स्थान कि यात्रा पर चलने से पहले विचार, संकल्प व निर्णय लेकर व्यक्ति निश्चित तिथि व समय पर बस, रेल या वायुयान से यात्रा कर कुछ घंटो व दिनों मे गन्तव्य पर पहुँचता है तो वहां उसे सुने, पढ़े या अनुमान के अनुरूप स्थान, वस्तुओं आदि को प्रत्यक्ष रूप से देखने का अवसर मिलता है। अनेकों परिस्थितियों में उसका मन उस नये स्थान की वस्तुओं को देखकर आह्लादित हो जाता है। इसका श्रेय मुख्य रूप से उसके मन में आये विचार, संकल्प व निर्णय को होता है। उसी प्रकार से डॉ. भारतीय ने अपने जीवन में आर्य समाज के एक विद्वान् लेखक ग्रन्थों के रचनाकार व साहित्यकार, व्याख्यानता व उपदेशक, पुस्तकों व आर्य पत्रों के सम्पादक के रूप में जो सफलतायें प्राप्त की, उसका श्रेय उनके उन निर्णयों को है जो उन्होंने अपने युवावस्था के दिनों में लिये थे। उनके जीवन का एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि उनके ग्रन्थों व लेखों को पढ़कर व उपदेशों को सुनकर अनेक युवाओं व वृद्धों आदि को भी प्रेरणायें मिलीं और उन्होंने उससे अपने जीवन को कृतकृत्य-सफल किया। यह उनके पुरुषार्थ का स्वयं व अन्यों को लाभ है जिस प्रकार वृक्ष को लगाने वाले को व अन्यों को उस वृक्ष के फल की भांति लाभ प्राप्त होता है।

हम इस लेख में डॉ. भवानीलाल भारतीय जी के जीवन व कृतित्व पर दृष्टिपात कर रहे हैं। आईये, उनकी जीवन यात्रा के कुछ तथ्यों पर भी दृष्टि डालकर आगे बढ़ते है। हमारे श्रद्धेय डा. भवानीलाल भारतीय का जन्म परबतसर (जनपद नागौर, राजस्थान) में आषाढ़ कृष्णा 3, विक्रमी सम्वत् 1985 तदनुसार 1 मई सन् 1928 ईस्वी को हुआ था। आपने विद्यालीय अध्ययन करते हुए सन् 1953 व 1961 में क्रमश: हिन्दी व संस्कृत में एम.ए. किया। यद्यपि सन् 1961

में ही आप अध्ययन के क्षेत्र में कार्य करने लगे परन्तु आपने उच्चस्तरीय अध्ययन जारी रखा और **सन् 1968 में ऋषि दयानन्द और आर्य समाज की संस्कृत साहित्य को देन विषय में पी.एच-डी. की उपाधि प्राप्त की।** डॉ. मंगलदेव शास्त्री तथा डॉ. सूर्यकान्त, काशी आपके परीक्षक थे। आपका यह शोध-ग्रन्थ रामलाल कपूर ट्रस्ट, सोनीपत से प्रकाशित हुआ। महर्षि दयानन्द व आर्य समाज की संस्कृत साहित्य को देन विषयक आपका अध्ययन व कार्य देश व समाज के लिए एवं संस्कृत जगत के लिए एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक अवदान है। यह अप्राप्य ग्रन्थ इस समय अपने नये संशोधित संस्करण की प्रतीक्षा कर रहा है। इस शोध उपाधि पी.एच.डी के अतिरिक्त आपने सिद्धान्त वाचस्पति परीक्षा भारत में सर्वप्रथम रहकर उत्तीर्ण की जिसका संचालन भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् द्वारा किया जाता था और यह परिषद की सर्वोच्च परीक्षा थी। इन उपाधियों के अतिरिक्त हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से साहित्य-रत्न' की परीक्षा सन् 1952 में, भारतीय विद्या भवन, मुम्बइ से **'उपनिषदालंकार'** एवं **'संस्कृत विशारद'** स्वाध्याय मण्डल, पारडी-गुजरात से उत्तीर्ण व प्राप्त कीं। आपने सन् 1984 में सरकार की सेवा से अवकाश प्राप्त किया। तब से आप अध्ययन, पत्र-पत्रिकाओं के लिए लेखन, छोटी-बड़ी पुस्तकों के प्रणयन तथा आर्य समाजों में प्रवचन व उपदेशों का कार्य करने के साथ इस प्रकार की अन्यान्य गतिविधियों में संलग्न रहे हैं। **इन कार्यों को करते हुए आप पंजाब विश्वविद्यालय की दयानन्द वैदिक शोध पीठ के प्रोफेसर तथा अध्यक्ष पद (1980-1991) पर कार्यरत रहे। इस अवधि में आपने 24 शोध छात्रों को वेद, मनुस्मृति, उपनिषद, ब्राह्मण, गीता, सूत्र साहित्य तथा ऋषि दयानन्द के जीवन, वांग्मय तथा कृतित्व पर शोध-ग्रन्थों को प्रस्तुत करने व शोध उपाधि (पी.एच.डी) हेतु मार्गदर्शन किया।** यहां कार्य करते हुए आपने ऋषि दयानन्द तथा वेद विषयक शोध कार्यों को स्वयं व निजी तौर पर करने के साथ अन्यों से भी सम्पन्न कराया तथा अन्य विश्वविद्यालयों के शोध कार्यों में भी सहयोग दिया। इसके साथ-साथ आपने **'विश्वेश्वरानन्द विश्वबंधु वैदिक रिसर्च इंस्टीट्यूट होशियापुर (पंजाब)** के निदेशक का अतिरिक्त कार्यभार भी वहन किया।

डॉ. भारतीय ने समय-समय पर देश के विभिन्न भागों में आयोजित वैदिक विषयों से सम्बन्धित शोध गोष्ठियों में सक्रिय भाग लिया एवं प्राच्य विद्या सम्मेलनों में अपने शोध-लेखों द्वारा योगदान किया। अखिल भारतीय प्राच्य विद्या परिषद् के शान्ति निकेतन (बंगाल), जयपुर, अहमदाबाद, विशाखापटणम तथा

हरिद्वार अधिवेशनों में भाग लेकर वेद विषयक शोध पत्रों का वाचन किया। कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, पं. राम गोपाल वैद्य स्मारक गोष्ठी तथा डॉ. प्रह्लाद कुमार स्मारक वैदिक संगोष्ठी में भी शोधपत्रों का आपने वाचन किया। आपके द्वारा प्रस्तुत समस्त शोध-पत्रों की संख्या शताधिक है। हम अनुभव करते हैं कि आपके सभी शोध पत्रों को प्राप्त कर एक या दो भागों में इनका भव्य प्रकाशन होना चाहिये जिससे यह बौद्धिक सम्पदा स्थायी हो सके। दिल्ली, पटियाला, अमृतसर, गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी, गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर, जयपुर, कुरूक्षेत्र, जोधपुर आदि नगरों में समय-समय पर आयोजित शोध संगोष्ठियों तथा विद्वत सम्मेलनों में आपने निबन्ध पाठ तथा व्याख्यान दिये। आपने विभिन्न विश्वविद्यालयों की संस्कृत शोध समितियों में सदस्य के रूप में भी भाग लिया। विद्यालय व महाविद्यालयों में प्रवक्ता, प्रवाचक तथा प्रोफेसर के पदों के लिये गठित विशेषज्ञ समितियों में आपकी गौरवपूर्ण उपस्थिति रही।

आप जिन दिनों जोधपुर, पाली, अजमेर, चण्डीगढ़ व श्रीगंगानगर में रहे, यहाँ की आर्य समाजों की गतिविधियों में भाग लेते रहे। सन् 1950 से 1980 के 3 दशकों में आप आर्य प्रतिनिधि सभा, राजस्थान के अन्तरंग सभासद, मंत्री तथा उप-प्रधान रहे और अपनी सेवाओं से सभा को योगदान दिया। आपने सन् 1958 से 1980 तक के 22 वर्षों में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा में अन्तरंग सदस्य तथा उपमंत्री के पद पर कार्य किया। **सार्वदेशिक सभा की धर्मार्य सभा के भी आप सभासद तथा अध्यक्ष रहे।** परोपकारिणी सभा, अजमेर स्वामी दयानन्द की स्थानापन्न तथा उत्तराधिकारिणी संस्था है। आप इस सभा के सदस्य, अन्तरंग सभासद तथा संयुक्त मंत्री के रूप में 1970 से अद्यावधि सदस्य हैं और इस सभा को अपने अपने ज्ञान व अनुभवों से महत्वपूर्ण सहयोग व योगदान दिया है। अजमेर स्थित महर्षि दयानन्द निर्वाण स्मारक ट्रस्ट तथा जोधपुर के महर्षि दयानन्द स्मृति भवन के ट्रस्टी एवं सदस्य के रूप में भी आपने अपनी सेवायें दी हैं। जोधपुर स्थित इस स्मृति भवन में हम 6 अप्रैल, 2014 को जाकर आये हैं। आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान **श्री राम निवास गुणग्राहक** इस समय यहां पुरोहित हैं। एक भव्य एवं विशाल, 50 फीट लम्बी व इतनी ही चौड़ी, यज्ञशाला के निर्माण का कार्य यहाँ आरम्भ किया गया है। लगभग 15-20 वर्ष पूर्व एक बार जब हम गये थे, उस समय स्मृति भवन में अन्तरंग सभा की बैठक हो रही थी और डॉ. भारतीय जी उस बैठक में सम्मिलित थे। आप आर्य लेखक परिषद्, कोटा से भी जुड़े रहे हैं और आपके होने से यह परिषद गौरव का अनुभव करती रही।

डॉ. भारतीय ने देश भर मे आर्य समाजों के उत्सवों व कार्यक्रमों में अपने अनुसंधान व गवेषणापूर्ण प्रेरक प्रवचनों, उपदेशों व व्याख्यानों से आर्यजनों को वेद-ज्ञानामृत का पान कराया। विदेशों में भी आपने वैदिक धर्म प्रचार का कार्य किया। नेपाल, हालैण्ड, मारीशस आदि में वेद और वैदिक संस्कृति तथा आर्य समाज के संदेश के प्रसारार्थ व्याख्यान, प्रवचन आदि तथा मारिशस में मुख्यत: आर्य पण्डितों तथा पुरोहितों को महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश, संस्कार विधि तथा ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका का गहन प्रशिक्षण (जुलाई 2003-दिसम्बर 2003) दिया। **मारिशस रेडियो तथा टेलिविजन से नियमित वेद प्रवचन किये तथा हालैण्ड के रेडियो स्टेशनों से विशेष पर्वों तथा सांस्कृतिक दिवसों पर व्याख्यान प्रसारित किये।**

डॉ. भारतीय के जीवन की एक प्रमुख गतिविधि उनका आर्य समाज की पत्र-पत्रिकाओं में लेखन रहा है। पुस्तकों का मूल्य होता है जो सबके लिए सहायक नहीं होता। आकार अर्थात् पृष्ठों की संख्या अधिक होती है जिससे पढ़ने में समय अधिक देना होता है। प्रकाशकों द्वारा प्राय: एक या दो हजार प्रतियां प्रकाशित की जाती हैं जो वर्षों तक खपती नहीं हैं। कई बार तो क्रेता पुस्तक को ले जाकर अपनी अलमारी में रख देते हैं और वर्षों तक उसका अध्ययन करने का अवसर नहीं आता। दूसरी ओर पत्र-पत्रिकाओं में लेख छपते हैं तो लिखने के कुछ ही दिन बाद वह पाठकों के हाथ में होता है। लेख पुस्तक की तुलना में अत्यन्त छोटा है जिस पढ़ने में प्राय: 10 से 15 मिनट का समय ही अपेक्षित होता है। समय-समय पर भिन्न-भिन्न विषयों पर किसी लेखक के लेख पढ़कर पाठक उससे भली प्रकार से जुड़ जाता है। आज स्थित यह हो गई है कि 14 अप्रैल 2014 को डॉ. अम्बेडकर के व्यक्तित्व पर लिखा गया हमारा एक लेख "युवा उद्घोष, दिल्ली" में प्रकाशित होकर 16 अप्रैल, 2014 को प्रात: 6:00 बजे हमें इमेल पर प्राप्त हो गया। इतना ही नहीं हमने 14 अप्रैल, 2014 को यह लेख 2:00 बजे दिन में पत्र-पत्रिकाओं सहित अपने अनेक मित्रों व पाठकों को भेजा था। अपराह्न 2:45 बजे जब हम अपने पूर्व कार्यालय के एक आयोजन में पहुंचे तो हमें आश्चर्य हुआ कि भेजने के 45 मिनटों में हमारे अनेक मित्रों ने लेख पढ़ लिया था जिसके लिए उन्होंने हमें धन्यवाद किया। संचार क्रान्ति का यह एक नमूना है। हम भी अपनी युवा अवस्था में पत्र-पत्रिका में प्रकाशित लेखों के माध्यम से डॉ. भारतीय सहित पं. विश्वनाथ विद्यालंकार, पं. राजवीर शास्त्री, लाल दीप चन्द आर्य, प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, कैप्टेन देवरत्न आर्य, श्री विजय कुमार, श्री

अजय कुमार आदि अनेक विद्वानों लेखकों, सम्पादकों व प्रकाशकों से जुड़े। हम समझते हैं कि डॉ. भारतीय जी से परिचित देश व विदेश में बड़ी संख्या में आर्य व इतर जन हैं जो विगत 60–65 वर्षों में उनके लेखों व पुस्तकों आदि को पढ़कर तथा उनके उपदेश आदि सुनकर उनसे जुड़े हैं। अतः किसी भी विद्वान् का सबसे प्रभावशाली कार्य हमें पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख लगते हैं और पुस्तकें व उपदेश इसके साथ व बाद में आते हैं। **आर्य समाज की संस्थाओं के पत्रों में सन् 1950 से अब तक डॉ. भारतीय जी के सहस्रों लेखकों का प्रकाशन हुआ है।** आपका पहला लेख सन् 1950 में सार्वदेशिक मासिक में छपा था। आर्य समाज की प्रायः सभी पत्रिकाओं सहित प्रमुख रूप से वेदवाणी, परोपकारी तथा अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेद पीठ, दिल्ली की शोध पत्रिका में वेद तथा ऋषि दयानन्द विषयक शोध लेख प्रकाशित हुए। इन लेखों से आपकी ख्याति देश–विदेश में हो गई। हम अनुभव करते हैं कि पत्र–पत्रिकाओं में विभिन्न विषयों पर आपके लेखों का प्रकाशन आपकी प्रतिभा व ख्याति के प्रसार में सबसे अधिक सहयोगी रहा। आपने न केवल लेख व पुस्तकें ही लिखी हैं अपितु आर्य जगत की अनेक पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया है। **आपके द्वारा सम्पादित कुछ पत्रिकायें आर्य मार्तण्ड (अजमेर), परोपकारी (अजमेर) तथा वेदपथ (अजमेर) हैं।**

डॉ. भारतीय ने लेखन के क्षेत्र में अनेक बहुमूल्य ग्रन्थ प्रदान किये। उनके ग्रन्थों की सूची विस्तृत है। हमारी दृष्टि में उनके कुछ प्रमुख महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ, नवजागरण के पुरोधा: दयानन्द सरस्वती, दयानन्द और आर्य समाज की संस्कृत साहित्य को देन, श्रद्धानन्द ग्रन्थावली, आर्य लेखक कोष, ऋषि दयानन्द–सिद्धान्त और जीवन दर्शन, आर्य समाज के वेद सेवक विद्वान्, श्री कृष्ण जीवन चरित, स्वामी दयानन्द व स्वामी विवेकानन्द का तुलनात्मक अध्ययन, दयानन्द साहित्य सर्वस्व, आर्य समाज के इतिहास का साहित्य संबंधी 5वां खण्ड, दयानन्द के भक्त, प्रशंसक और सत्संगी, आर्य समाज के पत्र और पत्रकार आदि हैं। हमें आपके अधिकांश ग्रन्थों को देखने व पढ़ने का अवसर मिला है और इससे हमें जो लाभ हुआ उसका मूल्यांकन करना कठिन है। इतना ही कह सकते हैं कि हम सदैव आपके ऋणी हैं। अनेक विदेशी विद्वान भी वेद एवं महर्षि दयानन्द के जीवन व उनके वेद विषयक साहित्य के अध्ययन में संलग्न रहे हैं। आस्ट्रेलिया की राष्ट्रीय यूनीवर्सिटी के प्रो. जे.टी.एफ. जार्डन्स, अमेरिका के मिस्सोरी स्टेट विश्वविद्यालय के प्रो. लेवेलिन तथा हैडरबर्ग विश्वविद्यालय के प्रो. टिने से शोध विषयक

आपका परस्पर गहन परामर्श व विचार विमर्श रहा है।

डॉ. भारतीय से जुड़े हमारे कुछ अपने निजी संस्मरण भी हैं। हम अपनी युवावस्था सन् 1972 व उसके बाद डॉ. भारतीय जी के आर्य पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों को पढ़कर उन्हें पत्र लिखते थे जिसके उत्तर हमें प्राप्त हुआ करते थे। इस प्रकार से पत्रों की एक बहुत बड़ी राशि हमारे पास एकत्रित हो गई जिन्हें पढ़कर हमें प्रसन्नता होती थी। लगभग 25-30 वर्ष पूर्व डॉ. भारतीय आर्य समाज, धामावाला देहरादून में प्रवचनों के लिए आये थे। यहाँ हमने उनके सभी प्रवचन सुने। एक प्रवचन में उन्होंने उन दिनों देहरादून के प्रसिद्ध अंग्रेजी माध्यम के 'दून स्कूल' में एक छात्र के स्कूल में हिन्दी बोलने पर किए गये अर्थ-दण्ड fine को अपने प्रवचन का विषय बनाया था और विषय से जुड़ी बहुत गम्भीर व महत्वपूर्ण बातें बताईं थीं। इस घटना से सम्बन्धित समाचार उनके देहरादून आगमन से कुछ दिन पूर्व ही सारे देश की पत्र-पत्रिकाओं में छपा था। उनका प्रवचन बहुत ही प्रभावशाली था। हम प्रायः प्रत्येक वर्ष अप्रैल में बैसाखी के दिन गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार व गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर के उत्सवों पर जाया करते थे। बैसाखी के दिन ही यहाँ आर्य वानप्रस्थ आश्रम व वेद मन्दिर, गीताश्रम, ज्वालापुर के भी वार्षिक उत्सव हुआ करते थे और अब भी होते हैं। हम प्रत्येक वर्ष कुछ समय के लिए इन उत्सवों में अवश्य पहुँचते थे। सन् 1991 में एक अवसर पर भी हम वहाँ गये थे। डॉ. भारतीय जी के वहाँ दर्शन हुए। गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वलापुर में उनका प्रवचन सुना। उस दिन वहाँ सार्वदेशिक सभा के मंत्री डॉ. सच्चिदानन्द शास्त्री भी उपस्थित थे। उनसे मिलकर डॉ. भारतीय व हम पैदल बातें करते हुए गंगा के किनारे-किनारे चलकर वेद मन्दिर, गीताआश्रम, ज्वालापुर पहुँचे थे। वेद मन्दिर में सामवेद के भाष्यकार, अनेक वैदिक ग्रन्थों के प्रणेता, वेद मर्मज्ञ व सुप्रसिद्ध विद्वान डॉ. रामनाथ वेदालंकार से मिले व वार्तालाप किया। अनेक विषयों पर बहुत उपयोगी वार्तालाप डॉ. रामनाथ जी व डॉ. भारतीय जी में हुआ था। इस बैठक में सत्यार्थ प्रकाश के 37वें संस्करण पर भी चर्चा हुई थी। एक अन्य अवसर पर डॉ. भारतीय हमें गुरुकुल कांगड़ी में मिल गये। हम उनके साथ आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब के प्रधान श्री वीरेन्द्र जी के पास जा रहे थे कि मार्ग में सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान पं. विश्वश्रवा, बरेली वाले मिल गये। भारतीय जी द्वारा हमारा परिचय उनसे कराया गया। देहरादून का उल्लेख करने पर उन्होंने पूछा कि पं. विश्वनाथ विद्यालंकार जी कैसे हैं? भारतीयजी ने ही उत्तर में उन्हें बताया कि उनका तो कुछ समय पूर्व परलोक गमन हो गया है। उनके

दिवंगत होने की सूचना इन पंक्तियों के लेखक द्वारा ही आर्य जगत को मिली। पं. विश्वनाथ विद्यालंकार की मृत्यु के अगले ही दिन हमने एक विस्तृत समाचार आर्य जगत की अनेक पत्र-पत्रिकाओं को भेज दिया था जो प्रायः सभी में प्रकाशित हुआ था। पं. विश्वश्रवा जी से मिलकर भारतीयजी के साथ हम श्री वीरेन्द्र जी से उनके कक्ष में मिले। अनेक विषयों पर चर्चा करते हुए वीरेन्द्रजी ने भारतीयजी को आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब के इतिहास के लेखन का प्रस्ताव किया। इस विषय पर विस्तार से चर्चा हुई थी परन्तु किन्हीं कारणों से यह कार्य आगे नहीं बढ़ा। जोधपुर में हमारी बड़ी बहिन की ससुराल होने के कारण सन् 1976 से हमारा वहाँ जाना होता रहता है। वर्षों पूर्व ऐसी ही एक यात्रा में हम भारतीय जी के निवास स्थान नन्दनवन गये थे। उन्होंने खुले मन से हमारा स्वागत किया, अपना पूरा पुस्तकालय दिखाया, विस्तार से अनेक विषयों पर चर्चा की और भोजन का निमन्त्रण दिया। उन्होंने बताया था कि एक बार श्री आदित्यमुनि भी उनके निवास पर आये थे। उन्होंने उनका पुस्तकालय देखा था और अनेक विषयों पर चर्चा की थी। डॉ. साहिब के पुस्तकालय में सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम संस्करण सहित प्रायः सभी संस्करण हैं। हम समझते हैं कि उनके पुस्तकालय में बड़ी संख्या में दुर्लभ ग्रन्थों का संग्रह है जिसके संरक्षण पर ध्यान दिया जाना चाहिये। एक अन्य अवसर पर दूसरी बार भी हम उनके जोधपुर निवास पर गये थे। सन् 1994 में **सरिता समूह** की लोकप्रिय पत्रिका **"सरस सलिल"** में "आर्य समाज विफल क्यों हुआ?" विषय पर लेख छपा जिसमें आर्य समाज पर अनेक आक्षेप किये गये थे। आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश के यशस्वी मन्त्री श्री धर्मेन्द्र सिंह आर्य ने इसकी जानकारी देकर हमें इसका खण्डन प्रकाशित कराने का आग्रह किया था। हमने अनेक समाचार-पुस्तक-पत्रिका विक्रेताओं के यहाँ ढूंढ़ कर लेख से सम्बन्धित पत्रिका के दोनों अंकों को प्राप्त किया और इनकी फोटो प्रतियां ले जाकर डॉ. रामनाथ वेदालंकार जी को देते हुए इन लेखों का खण्डन करने का अनुरोध किया। उन्होंने इन लेखों को डॉ. भारतीय जी को खण्डन हेतु भेज दिया। पण्डित रामनाथ जी ने हमें बताया था कि डॉ. भारतीय जी खण्डन कला में दक्ष है और पहले भी ऐसे लेखों का खण्डन कर चुके हैं। कुछ दिनों बाद डॉ. भारतीय लिखित एक विस्तृत लेख **"आर्य समाज विफल नहीं हुआ"** शीर्षक से आर्य जगत, दिल्ली के एक अंक में 2 या अधिक पृष्ठों में प्रकाशित हुआ। इसे देखकर हमें अतीव प्रसन्नता हुई थी। यह पत्रिका एवं भारतीयजी का खण्डनात्मक लेख हमारे साहित्य भण्डार में उपलब्ध है।

डॉ. राम कृष्ण आर्य ने डॉ. भारतीय के निर्देशन में **"स्वामी दयानन्द का आर्थिक चिन्तन"** विषय पर शोध कार्य कर डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। हमें लगता है कि यदि डॉ. भारतीय पंजाब विश्वविद्यालय की दयानन्द वैदिक शोध पीठ के प्रोफेसर तथा अध्यक्ष न होते तो शोध का यह कार्य इस रूप में अस्तित्व में न आता। इस कार्य के सम्पादन में दोनों ही महानुभावों का अन्यतम योगदान है। शोध ग्रन्थ की प्रकाशित की गई प्रति में डॉ. रामकृष्ण आर्य ने जो भूमिका दी है, वह डॉ. भारतीय के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालती है जिसे प्रस्तुत करने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहे हैं। वह लिखते हैं–**"महर्षि दयानन्द अनुसंधान पीठ पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ के तत्कालीन अध्यक्ष, अब सेवानिवृत, माननीय डॉ. भवानीलालजी भारतीय यदि वैयक्तिक अभिरुचि लेकर अपने निर्देशन में विषय का पंजियन न कराते और मुझसे शोध प्रबन्ध न तैयार कराते तो इस स्तर पर मेरे लिखे विचार प्रकाशित नहीं होते। गुरु प्रवर डॉ. भारतीय जी का किन शब्दों में आभार प्रकट करूं और उनको देने के लिये भी शोधकर्ता के पास क्या है। उनका आशीर्वाद ही उसका सम्बल रहा है। पंजियन कराने से लेकर चण्डीगढ़ में, उनके द्वारा, उनके बंगले पर निवास और आतिथ्य प्रदान करने तथा ग्रन्थ की अनुभूमिका लिखने तक उन्होंने जो कुछ अपनापन दिखाया, वह मुझे सदैव स्मरण रहेगा।"**

हम समझते हैं जब भी कोई विद्वान किसी कार्य को निःस्वार्थ भाव से करता है तो वह सम्मान का अधिकारी बनता है। सभी लोगों के दिलों में वह सम्मानित, आदरणीय व श्रद्धा का पात्र बनता ही है। इन्हीं भावनाओं को व्यक्त करने के लिए संस्थाओं द्वारा ऐसे महनीय विद्वानों को पुरस्कार आदि से सम्मानित करने की परम्परा है। **6 दशकों तक विस्तृत लेखन तथा शोध कार्यों के लिए आर्य समाज, सान्ताक्रुज, मुम्बई व आर्य समाज, फुलेरा द्वारा दयानन्द सम्मान एवं आर्य समाज भुवनेश्वर द्वारा दयानन्द शोध सम्मान से आपको सम्मानित किया गया।** हम समझते हैं कि डॉ. भवानीलाल भारतीय जी का जो विशाल व महिमापूर्ण व्यक्तित्व है, वह इतना गौरवपूर्ण है कि उसके सामने सभी पुरस्कार उनके लिए छोटे पड़ते हैं। हम अपने हृदय से उनके अच्छे स्वास्थ्य व दीर्घायु की कामना करते हैं और चाहते हैं कि वह स्वस्थ रहते हुए 100 वर्ष व अधिक समय तक सुखी जीवन व्यतीत करते हुए आर्य समाज का मार्गदर्शन करें।

स्वामी जगदीश्वरानन्द कृत विद्वत्तापूर्ण पुस्तकें

महाभारतम् (एक भाग में सम्पूर्ण)	७५०,००
वाल्मीकि रामायण	३७५,००
सामवेद भाष्य सचित्र	१५०,००
षड्दर्शनम्	२५०,००
विदुरनीतिः	१०,००
चाणक्यनीति-दर्पण	१२५,००
चतुर्वेद शतकम्	१२५,००
विद्यार्थी लेखावली (चरित्र निर्माण संबंधी ट्रैक्टों का संग्रह)	७५,००
गायत्री चालीसा	१५,००
भगवान् श्रीकृष्ण और गीता उपदेश	१५,००
यज्ञोपवीत का महत्त्व	८,००
वैदिक सत्यनारायण व्रतकथा	८,००
भारत की अवनति के सात कारण	२०,००
वैदिक सूक्ति सरोवर	२५,००
ब्रह्मचर्य गौरव	१८,००
विद्यार्थियों की दिनचर्या	२०,००
कुछ करो कुछ बनो	३०,००
मर्यादा पुरुषोत्तम राम	२५,००
आदर्श परिवार	३५,००
वैदिक विवाह पद्धति	५०,००
सामवेद शतकम्	१८,००
ऋग्वेद शतकम्	१८,००
यजुर्वेद शतकम्	१८,००
अथर्ववेद शतकम्	१८,००
भक्ति-संगीत शतकम्	२०,००
दिव्य औषधियाँ	६५,००
चमत्कारी औषधियाँ	६५,००
घरेलू औषधियाँ	६५,००
स्वर्ण-पथ	२५,००
दिव्य रसायन : गोमूत्र	८,००
वेद सौरभ	२५,००
वैदिक उदात्त भावनाएँ	२५,००
हास-परिहास	१२,००
बाल शिक्षा	१८,००
ईशोपनिषद्	२५,००
दिव्य दयानन्द	३०,००

जून २०१४ Registered with Regn. of News Paper for India
वेदप्रकाश R.No. 627/57 Regd. No. DL(DG)-11/8030/2012-14, U(DGO) 01/2013-14 15.07.2013

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

छीना बच्चा हथिनी से : विराज जी मूल्य 250.00

पुस्तक का विषय रोमांचकारी है: गुरुकुल कांगड़ी के आठ ब्रह्मचारियों द्वारा तीस चालीस हाथियों की टोली से हाथी का एक छोटसा सब बच्चा छीन लाने का सत्य वृत्तान्त।

गुरुकुल शिक्षा पद्धति का जीवन्त विवरण।

गुरुकुल में पुस्तकी शिक्षा से अधिक व्रताभ्यास अर्थात् चरित्र निर्माण पर ध्यान दिया जाता था।

ब्रह्मचर्य, तपस्यामय जीवन, व्यायाम और प्राणायाम का अभ्यास युवकों में कितनी ऊर्जा, साहस, स्वाभिमान और निडरता जगा देता है, पढ़कर आश्चर्य होता है।

गुरुकुल को देखने अंग्रेज राज्यपाल सर जेम्स मेस्टन, वायसराय लार्ड चेम्सफोर्ड, महात्मा गांधी, इंग्लैंड के भावी प्रधानमंत्री श्री रैम्जे मैकडोनल्ड आये थे।

उन दिनों छुआछूत, जात पांत आदि कुरीतियों और जादू टोना आदि अन्ध विश्वासों को हटाने के लिए समाज द्वारा किये गये आन्दोलन और क्रान्तिकारियों के हिंसक तथा महात्मा गाँधी के अहिंसक स्वतन्त्रता संग्रामों ने युवकों में कितनी जागृति ला दी थी, इसका सजीव अंकन है।

स्वामी श्रद्धानन्द, आचार्य अभयदेव विद्यालंकार, व्यायाम गुरु प्रो. नारायण राव, श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जैसे बलिदानियों ने किस प्रकार स्वयं को राष्ट्र सेवा के लिए अर्पित कर दिया, इसे पढ़कर श्रद्धा जागती है।

आज कल के छल कपट, असीम लोभ, अनाचार, घूसखोरी, विश्वासघात, हत्याओं और आत्महत्याओं के दम घोटने वाले वातावरण में यह पुस्तक ताजा, शीतल हवा के झोंके के समान है।

किशोरों और युवकों के लिए यह स्वच्छ, चरित्र निर्माणकारी मार्गदर्शिका है।

प्रकृति का निकट सम्पर्क वन जीवों ही नहीं, वनस्पतियों के साथ भी आत्मीयता बढ़ता है; पर्यावरण की सुरक्षा के प्रति जागरूकता पैदा करता है।

यह पुस्तक हर विद्यालय और कॉलेज के पुस्तकालय में रहनी चाहिए और हर छात्र-छात्रा को पढ़ाई जानी चाहिए।।

अच्छे साहित्य को पढ़कर लोग अच्छे नागरिक बनते हैं।

प्रकाशक-अजयकुमार, मुद्रक-अजयकुमार, स्वामी-अजयकुमार, गोविन्दराम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली-6, अजयकुमार द्वारा सम्पादित, प्रिंटर्स-अजय प्रिंटर्स, 1586/C-13, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32 में प्रिंट करा, वेदप्रकाश कार्यालय, 4408, नई सड़क, दिल्ली-6 से प्रसारित किया। न्यायक्षेत्र-दिल्ली।